RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-08
August-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

राजस्थान में उपाश्रयी (सबॉल्टर्न) इतिहास लेखनः भील जनजाति के विशेष सन्दर्भ में

निर्मल शर्मा

वरिष्ठ शोधार्थी इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 16 Aug 2019

Keywords
सबॉल्टर्न, कलेक्टीव, उपाश्रयी, स्टडीज, अभिजात्यवाद, ट्राईब, उपत्यकाओं

***Corresponding Author**
Email: nirmalsharma2024[at]gmail.com

ABSTRACT

आदिवासी हमारे देश के मूल निवासी हैं। प्राचीन भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं इतिहास की बहुमूल्य धरोहर के रूप में इन्होंने अपना 'आदिरूप' प्राचीन से अर्वाचीन युग तक संजोकर रखा है। अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक परम्पराओं, धार्मिक विश्वास, राजनीतिक प्रणाली एवं सामाजिक रीति–रिवाजों के कारण अन्य समाजों से इनका पृथक अस्तित्व रहा है। जंगल में रहने के कारण यह लोग समाज की मुख्य धारा से अलग रहे हैं। अतः ऐतिहासिक सन्दर्भ में भी इनको उपेक्षित रहना पड़ा। भारतीय आदिवासी समुदायों पर लेखन की शुरूआत औपनिवेशिक दौर मे आरम्भ हुई। 1970 के दशक में इतिहास लेखन में एक नया समूह उभर कर सामने आया, जो सबॉल्टर्न स्टडीज कलेक्टीव (ग्रुप) कहलाया। यह दक्षिणी एशियाई विद्वानों का समूह था। भारत में इस समूह के प्रमुख इतिहासकार रणजीत गुहा रहे हैं। उपाश्रयी इतिहास लेखन के अन्तर्गत समाज के निम्न वर्ग, आदिवासी वर्ग, किसान–मजदूर वर्ग, महिला वर्ग इत्यादि को प्रमुखता प्रदान की जाती है जो अभिजात्य वर्ग की श्रेणी में शामिल नहीं होते हैं। उपाश्रयी इतिहास लेखन में जनजातियों की संस्कृति, राष्ट्रीय आन्दोलन में इनके महत्व को रेखांकित किया गया है। राजस्थान में अनेक जनजाति समूह निवास करते हैं। इनमें भील जनजाति प्रमुख है। अतः प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में उपाश्रयी इतिहास लेखन में जनजातियों का महत्व को रेखांकित करते हुए राजस्थान में जनजातियों के सन्दर्भ में किये गये उपाश्रयी इतिहास लेखन को भील जनजाति के विशेष सन्दर्भ में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

शब्द–कोष :

उपाश्रयी (सबॉल्टर्न) *: सबॉल्टर्न शब्द एन्टोनियो ग्राम्शी के पाण्डुलिपि लेखनों से लिया गया है जिसका अर्थ है निकृष्ट या निम्न श्रेणी का चाहे यह वर्ग जाति, वय, लिंग अथवा पद किसी भी दृष्टि से हो।*

जनजाति : जंगलों या पहाड़ी स्थानों में रहने वाले ऐसे लोगों का समूह जो शिक्षा, सभ्यता आदि में समीपवर्ती लोगों से कुछ पिछड़े हुए हैं।

भील : दक्षिणी राजस्थान में निवास करने वाली प्रमुख जनजाति।

1970 के दशक में इतिहास लेखन में एक नया समूह उभर कर सामने आया, जो सबॉल्टर्न[1] स्टडीज कलेक्टीव (ग्रुप) कहलाया। यह दक्षिणी एशियाई विद्वानों का समूह था, जिसमें संबंधित राष्ट्रों में एक नई दृष्टि से इतिहास के अध्ययन करने का प्रयास किया। इसे कहा गया – निम्न स्तरों से लिखा गया इतिहास (History from Below)।

इसके केन्द्र बिन्दु थे, वे वर्ग, घटनायें, आन्दोलन जो अब तक इतिहास लेखन में उपेक्षित थे। इस उपाश्रयी समूह ने समाज के निचले स्तरों पर होने वाली सामाजिक परिघटनाओं, जीवनयापन शैली, राजनैतिक आन्दोलनों इत्यादि की ओर स्वयं को उन्मुख किया। भारत में इस समूह के प्रमुख इतिहासकार रणजीत गुहा रहे हैं। इन्होंने सबॉल्टर्न स्टडीज नाम से प्रकाशित चार खण्डों में संबंधित घटनाओं के महत्व को उजागर कर भारत में इतिहास लेखन को एक नई विद्या से परिचित कराया। इनके अनुसार भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के समय अभिजात्य राजनीति के समांतर सामान्य जनों की राजनीति का एक प्रभाव क्षेत्र था जिसमें सबॉल्टर्न या अधीनस्थ वर्गों और समूहों के प्रमुख कार्यकर्ता थे। इनके अनुसार भारतीय राष्ट्रवाद के उभार के संदर्भ में इतिहास–लेखन दो प्रकार के पक्षपातपूर्ण अभिजात्यवाद से ग्रस्त है और ये दोनों सम्मिलित रूप से इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं कि राष्ट्रीय चेतना का विकास और भारतीय राष्ट्रीय का निर्माण अभिजात्य वर्गीय उपलब्धियॉ थी। ये हैं – ब्रिटिश साम्राज्यवादी इतिहास लेखन और राष्ट्रवादी इहितहास लेखन इनके अनुसार राजनीति के भिन्न अर्थात् दूसरे प्रभाव क्षेत्रों की पहचान कर वैकल्पिक विमर्श विकसित किया जाना चाहिए।

उपाश्रयी इतिहास लेखन के अन्तर्गत समाज के निम्न वर्ग, आदिवासी वर्ग, किसान–मजदूर वर्ग, महिला वर्ग इत्यादि को प्रमुखता प्रदान की जाती है जो अभिजात्य वर्ग की श्रेणी में शामिल नहीं होते हैं। इस लेखन के आधार विषय वे हैं जो इतिहास लेखन के संदर्भ में अब तक उपेक्षित रहे हैं। उन्हें अनेक विषयों से जोड़कर देखा जाता है जो कालिक परिप्रेक्ष्य में मुगल काल से 1970 के दशक तक तथा विषयवस्तु की दृष्टि से सम्प्रदायवाद से औद्योगिक श्रम तक विस्तीर्ण है और

RRIJM 2015, All Rights Reserved

शैली में वर्णनात्मक से अवधारणात्मक तक एक व्यापक विविधता दर्शाती है।[2] वस्तुतः उपाश्रयी समूह ने इतिहास लेखन को न केवल नवीनता अपितु सम्पूर्णता प्रदान की है।

उपाश्रयी इतिहास लेखन में जनजाति एक प्रमुख विषय रहा है। जनजाति शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता है। जनजातियों के लिए विद्वानों ने आदिम, आदिवासी, जंगल निवासी इत्यादि शब्दों का भी प्रयोग किया। भारत में सामान्यतः आदिवासी शब्द ही अधिक लोकप्रिय रहा है। अंग्रेजों ने इसके लिए ट्राईब शब्द का उपयोग किया। वर्तमान जनजाति के अर्थ में इसका प्रयोग 19वीं शताब्दी की उपज है जब ब्रिटेन ने अपने उपनिवेशों यथा अफ्रीका एवं एशिया के कुछ भागों को ट्राईब कहा।[3] भारत में अनेक जनजातियॉ निवास करती हैं, जिनकी विशिष्ट संस्कृति है तथा निश्चित भौगोलिक क्षेत्र है। ये जनजातियां आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होती है। इनमें सामान्यतः समानता की भावना होती है। हॉलाकि उम्र और लिंग इत्यादि वे आधार पर कुछ स्तरीकरण इनमें पाया जाता है। अंग्रेजों में सर्वप्रथम विशिष्ट संस्कृति और भौगोलिक अलगाव के आधार पर 1935 ईस्वी में जनजातियों कीसूची बनवाई और इन्हें अनुसूचित कहा गया। उपाश्रयी इतिहास लेखन में जनजातियों की संस्कृति, राष्ट्रीय आन्दोलन में इनके महत्व को रेखांकित किया गया है। रणजीत गुहा ने अपनी पुस्तक 'एलीमेन्टरी ऑस्पेक्टस ऑफ पीजेन्ट्स इनसर्जेन्सी' में भारत में होने वाले जनजातीय विद्रोहों को स्वशासी माना है जो स्वयं संगठित होकर दबाव बनाते हैं। इसी से राष्ट्रीय आन्दोलन ने गति पकड़ी।

राजस्थान में अनेक जनजातीय समूह निवास करते हैं। इनमें भील जनजाति प्रमुख है जो दक्षिण राजस्थान में अरावली की उपत्यकाओं में अपनी प्राचीन विरासत को सहेजे हुए हैं। इस जनजाति का उल्लेख वैदिक काल और पुराण युग में भी मिलता है। वैदिक साहित्य में मध्य भारत में निवास करने वाली एक जाति निषाद का बहुत बार उल्लेख होता है जिसका निवास स्थान भील जाति के इतिहास सिद्ध निवास स्थान से पूर्णतया मेल खाता है। वास्तव में मध्यभारत में बहुत अधिक जनजातियॉ निवास करती हैं। भारत में जनजातियों का सर्वाधिक सकेन्द्रण यही है। सामान्यतया यह अनुमान प्रकट किया जाता है कि निषाद किसी एक विशेष जनजाति के लिए प्रयुक्त न होकर उन सभी जनजातियों के लिए प्रयोग में लिया जाता था जिन पर आर्य संस्कृति का प्रभाव नगण्य था। इस दिशा में उचित शोध की आवश्यकता है ताकि भील जनजाति की प्राचीनता सिद्ध हो सके।

असंकित के अनुसार भील भारतवर्ष के सबसे पुराने निवासियों में से हैं, जिन्होंने ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व उत्तर व उत्तर–पश्चिम की ओर से इस देश में प्रवेश किया था। उनके विचार में आर्यों के आक्रमणों ने ही इन्हें वनों का निवासी बनाया।[4] इसके विपरीत कर्नल टॉड भीलो को यहीं का मूल निवासी मानते हैं और इन्हें वनपुत्र कहकर सम्बोधित करते हैं और लिखते हैं कि जहॉ ये पैदा हुए वहीं पर अभी तक स्थिर हैं।[5] महाकाव्य काल में भी भीलों से सम्बन्धित वर्णन मिलता है। रामायण के रचयिता वाल्मीकि निषाद ही थे। निषादराज ने राम लक्ष्मण व सीता को गंगा पार करने में सहायता दी थी।[6] राम को वनवास के दौरान झूठे बैर खिलाने वाली शबरी को भी भीलनी माना गया है। महाभारत में एकलव्य का प्रसंग आता है, जो निषादराज हिरण्यधनु के पुत्र थे, जिनकी गुरूभक्ति एवं धनुर्विद्या सुप्रसिद्ध है। एकलक्ष्य ने द्रोणाचार्य को गुरु–दक्षिणा के रूप में अपने दाहिने हाथ का अंगूठा भेंट कर दिया।[7] ऐसा माना जाता है कि भगवान श्रीकृष्ण की मृत्यु जरठ नामक एक भील के तीर से हुई। इसी को आधार बनाकर मेजर हेंडले लिखते हैं कि भीलों को यह शाप मिला कि वे अपने दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली से कभी तीर नहीं चला पायेंगे, इसीलिये भील तर्जनी का प्रयोग तीर चलाने में नहीं करते।

इस तरह भीलों की उत्पत्ति के संदर्भ में अनेक मिथक प्रचलित है। इसकी वास्तविकता को उजागर करने के लिए गहन शोध की आवश्यकता है। इसके लिए बहुविषयक दृष्टिकोण अपनाना होगा जिसमें समाजशास्त्र और मानिविकी के विषयो ंके आधार पर शोध–दर्शन विकसित करना होगा। साथ ही पुरातन ग्रन्थों में भील जनजाति से संबंधित कहानियों एवं मिथकों की भी सूक्ष्म पड़ताल की आवश्यकता है ताकि इनकी प्राचीनता और आर्य जाति से इनके सम्बन्धों की व्याख्या की जा सके। इन मिथकों का सबसे अधिक महत्व इस बात में है कि इनके आधार पर भील जनजाति के सामाजिक संगठन और जीवन की वर्तमान दशाओं को समझने में आसानी हुई है। मूल निवासी की दृष्टि में मिथक कोई काल्पनिक कहानी या मृत अतीत का विवरण नहीं होता, वह अभी आंशिक रूप से जीवित एक वृहत्तर वास्तविकता का कथन होता है। वह इस रूप में जीवित रहता है कि इसका पूर्व उदाहरण, उसका कानून तथा उसकी शिक्षा मूल निवासियों के जीवन को नियंत्रित करती है।[8]

राजस्थान में आजादी से पूर्व तक विभिन्न राजपूत राजवंशो का शासन रहा था। इसी कारण इतिहास लेखनी भी इसी वर्ग के आस–पास तक सीमित रहा है। राजपूत राजवंशो से पूर्व राजस्थान में कई स्थानों पर भील जनजाति का शासन रहा था। कई शताब्दियों तक दक्षिणी राजस्थान, मध्य भारत एवं गुजरात के कुछ क्षेत्रों पर इनका अधिकार रहा। बाद में राजपूतों की शक्ति बढने पर वे मैदानी क्षेत्रों में से निर्वासित कर दिये गये और धीरे–धीरे पहाडी क्षेत्रों पर अपना आवास बनाया और वहॉ से भी घने जंगलों में जाने को मजबूर होना पडा। जंगलो पहाडों की ओर पीछे हट जाने पर इन्होने परिवेश में अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रकृति के साधनों को प्रतियोगी बनाने हेतु अपनी क्षमताओं व सामाजिक संगठनों को विकसित किया।[9] परम्परागत मान्यताओं के आधार पर यह माना जा सकता है कि भील एवं अन्य अदिवासी राजस्थान के

मूल निवासी थे एवं उनको पराजित करने के बाद ही यहॉ राजपूतो ने अपने राज्य स्थापित किये।[10]

कुशलगढ़ क्षेत्र में राठौड राजपूतो में कुशला भील को मारकर कुशलगढ राज्य बसाया।[11] बॉसवाडा में बॉसियॉ भील को पराजित किया।[12] इसी प्रकार डूँगरिया भील का नाम डूंगरपुर राज्य के साथ जुडा है।[13] कोटा राज्य का नाम भी एक भील जाति काटिया पर आधारित है।[14] इन आख्यानों पर किसी सीमा तक विश्वास किया जा सकता है। इनसे यह निर्णय निकलता है कि इतिहास के किसी ने किसी कालखण्ड में यह संबंधित क्षेत्र भी नायकों से प्रशासित रहे थे। यह भील सरदारों के नियंत्रण के द्योतक है। एक सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आज भी क्षेत्रों में भील जनजाति की जनसंख्या बहुतयात में है। इस तरह इन क्षेत्रों में भील नायको की एतिहासिकता एवं कारनामों के संदर्भ में और अधिक शोध की आवश्यकता है।

मेवाड के शासकों एवं भील जनजाति का निकटतम् संबंध रहा है कर्नल जेम्स टॉड के अनुसार मेवाड में गुहिल (बाद में सिसोदिया) वंश के संस्थापक गुहिल ईडर के भीलों के साथ रहते थें। भीलराज मंडलीक ने गुहिल को राज्य का भार सौंपा।[15] टॉड के अनुसार बप्पा रावल (गुहिल का वंशज) को ऊंदरी के बालिया एवं ओगरा के देवा नामक दो भील युवकों ने राजा बनने एवं चित्तौडगढ़ का किला मौर्य शासक मानमौर्य से जीतने में बडी मदद की। बप्पा के राज्यारोहण के समय ओगणा के भील राजा को बप्पा के मस्तक पर अपने खून से तिलक करने का अधिकार प्राप्त हुआ। जहॉ टॉड 19वीं शताब्दी में भी टीके (तिलक) की इस प्रथा के प्रचलन की बात लिखता है। वहीं अर्सकिन के अनुसार यह प्रथा राणा हम्मीरसिंह के शासनकाल के बाद (1364 ई.) में समाप्त हो गयी।[16] प्रेसबिटेरियन मिशनरी जार्ज कार्स्टेयर्स ने 1920 के दशक में लिखा कि टीके की यह प्रथा आज भी प्रचलित है।[17] इस तरह भीलों ने मेवाड के शासकों को राज्य संस्थापन में बहुत मदद की। 16वीं सदी महराणा प्रताप को मुगल शासक अकबर के विरूद्ध हल्दी घाटी युद्ध में भीलों ने पूर्ण सहयोग दिया।[18] इस कारण से मेवाड के राज्य चिन्ह में भीलों को स्थान मिला। भील जनजाति और मेवाड शासकों के इस संबंध के बारे में अनेक लोग कथाये भी प्रचलित है। इन संबंधों की गहराई जानने के लिए विस्तृत शोध की आवश्यकता है।

भील जनजाति से संबंधित इतिहास लेखन की बात करें तो इस संबंध में काफी कुछ लिखा जा चुका है, लेकिन यह संस्कृति से संबंधित लेखन अधिक है, जो इतिहास से कही अधिक समाजशास्त्रीय अवधारणा के अधिक निकट है। सर्वप्रथम बी.एच.बेडेन पॉवेल ने 1899 में दि जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड में राजस्थान की आर्य प्रजातियों का अध्ययन किया। बाद में बार्नस ने 1907 में पश्चिमी भारत के भीलों पर एक निबन्ध लिखा। शरतचन्द्र राय ने राजसमंद की पहाडियों में रहने वाले भीलों की प्रथाओं का अध्ययन किया। एल.पी.टैक्सीटोरी जो इटली के प्रसिद्ध विद्वान थे, ने राजस्थान के प्राचिन समुदायों का समय–समय पर अध्ययन किया कर्नल जेम्स टॉड द्वारा लिखित एनल्स एण्ड एंटिक्विटीज ऑफ राजस्थान जो कि दो खण्डों में क्रमशः 1920 तक 1950 में प्रकाशित हुआ था, में जनजातिया संस्कृति का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। जार्ज कार्स्टेयर्स जो कि राजस्थान में ही पैदा हुये थे, ने भीलों का अध्ययन किया तथा उन कारकों का अध्ययन किया जो कि इन लोगों के जनजीवन के परिवर्तन में बाधक बनते है। इन उल्लेखों से पता लगता है कि इतिहास के विभिन्न कारखण्डों में भील जाति की भूमिका पर शोध कार्य होना भी शेष है। यह अध्ययन केवल सांस्कृति पक्ष पर ही अधिक बल देता है।

भारत में ब्रिटिश शासन स्थापित होने के बाद इसका प्रतिकूल प्रभाव जनजातियों पर विशेष रूप से पडा। भील जनजाति भी इससे अछूति नही रही। राजस्थान के शासकों के द्वारा अंग्रेजो के साथ 1818 ई. में अधीनस्थ मैत्री सन्धियॉ की गई हैं। इनके तहत राज्यों की आन्तरिक सुरक्षा का भार कम्पनी प्रशासन में ले लिया, जिससे अंग्रेजो और भीलों का सिधा टकराव निश्चित हो गया। अंग्रेजो ने वागड के भीलों को दबाकर इकरारनामें लिखवाये, जिससे आन्तरिक शान्ति बनी। हालांकि विद्रोह पूर्णतः शान्त नहीं हुए। भीलों के विद्रोहों को दबाने के लिए ही 1841 ई. में खैरवाडा भील कोर की स्थापना की गई।

इसकी स्थापना के संबंध में और भी अनेक तथ्य दिये जाते हैं। इसके वास्तविक कारणों की जांच पड़ताल आवश्यक है। एक महत्वपूर्ण बात जो हमें दिखाई देती है यह कि 1857 से पहले अनेक भील विद्रोह हुये, लेकिन 1857 के समय भीलों द्वारा कोई विद्रोह नहीं किया गया। यहां तक कि जब राजस्थान कि अधिकांश सैनिक छावनियो में भारतीय सैनिकों द्वारा विद्रोह का झण्डा बुलन्द किया गया, खैरवाड़ा की मेवाड़ भील कोर के सैनिक शान्त ही रहे। इसमें महारावल उदयसिंह प्रथम की रणनीति एवं कूटनीति को प्रमुख कारण माना जाता है। 1857 की क्रान्ति के वक्त इन्होंने खैरवाड़ा छावनी में भीलों के विद्रोह को नहीं होने दिया।[19]

अंग्रेजों और भीलों के आपसी सम्बन्धों पर इतिहास शोध में काफी कुछ लिखा जाना शेष है। ब्रिटिश प्रशासकों द्वारा भील जनजाति के संबंध में लागू किए गये नियमों तथा उनके प्रभावों का आंकलन किया जाना आवश्यक है। माना जाता है कि इन विरोधाभासी नियमों के कारण ही भील जनजाति ब्रिटिश शासन के दौरान आक्रामक बनी। इसी के साथ इस दौरान भील क्षेत्र के रियासती शासकों की भूमिका पर भी शोध कार्य अभी संतोषजनक स्थिति को प्राप्त नही कर पाया है। इस दिशा में भी शोधार्थियों में रूचि उत्पन्न किया जाना आवश्यक है।

ब्रिटिशर्स शासकीय नीतियों और रियासती शासकों के अत्याचारों के इतर भील जनजाति में सामाजिक सुधार एवं

राजनीतिक चेतना जागृत करने के अनेक प्रयास हुए। इनमे गोविन्द गीरि का भगत आन्दोलन, मोतीलाल तेजावत का एकी अन्दोलन प्रमुख है। इसके अलावा भोगीलाल पण्ड्या, हरिभाई किंकर, माणिक्य लाल वर्मा, अमृतलाल विट्ठलदास, भूलेलाल बयां इत्यादि के प्रयास सराहनीय है। लेकिन ब्रिटिश दमनवादी नीतियों के कारण इनके आन्दोलनों को दबा दिया गया जो मानगढ़ काण्ड[20], नीमड़ा काण्ड इत्यादि के रूप में दिखाई देते हैं। इतिहास लेखन में इन पर काफी लिखा गया है, लेकिन इस समय ब्रिटिश दमनवादी नीतियों के कारण इनका वास्तविक स्वरूप इतिहास लेखन में नही आ पाया। 'औपनिवेशिक सत्ता ने इन आन्दोलनों को अपराधी एवं डाकू इत्यादि के विरोध की 'संज्ञा दी'।[21] वास्तव में 'विद्रोहियों के जिन कार्यों को प्रशासन ने अपराध की संज्ञा दी है वे तो उनके विद्रोह के माध्यम थे'।[22]

निष्कर्ष – राजस्थान में भील आन्दोलन राष्ट्रवाद से भी प्रेरित था। राष्ट्रवाद का मतलब केवल ब्रिटिश विरोध ही नहीं होता..... इसमें एक नए समाज की इच्छा निहित होती है।[23] और ये भील आन्दोलन नई व्यवस्था के खिलाफ ही उभरकर सामने आया था। मेवाड़ जैसी रियासतों में किसान राष्ट्रवाद (अधिकांश किसान भील) निश्चित ही शहरी राष्ट्रवाद से पहले उत्पन्न हुआ।[24] भील किसानों में राष्ट्रवाद के इस नए स्वरूप की भावना विद्यमान थी। ये ब्रिटिश शासन सत्ता एवं राजशाही के खिलाफ उभरकर सामने आई। वास्तव में इस दिशा में और अधिक शोध कार्य किया जाना अपेक्षित है। वर्तमान में स्वदेशी इतिहास लेखन की चर्चा काफी प्रासंगिक है। यह स्वदेशी इतिहास लेखन तब ही अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त कर पायेगा जब तक भील जैसी जनजातियों के इतिहास को इहिास लेखन में उचित स्थान दिलवायेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सबॉल्टर्न' शब्द एंटोनियो ग्राम्शी के पांडुलिपि लेखनों से लिया गया है, जिसका अर्थ होता है, 'निकृष्ट या निम्न श्रेणी का' चाहे यह वर्ग, जाति, वय, लिंग अथवा पद किसी भी दृष्टि से हो।
2. Guha, Ranjit (ed.), Preface to subaltern studies, vol.2 Oxford University press, New Delhi, 1982.
3. जोशी, करूणा, जनजातिय क्षेत्र में स्वतंत्रता आन्दोलन, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, 2008, पेज नं. 7
4. अर्सकिन, के.डी., राजपूताना गजेटियर, खण्ड – (II)–, द मेवाड रेजीडेन्सी, स्काटिश मिशन इण्डस्ट्रीज कं. लिमिटेड, अजमेर, 1908, पृ.सं. 228
5. टॉड, कर्नल जेम्स, ट्रेवल्स इन वेस्टर्न (हिन्दी अनुवाद) – पश्चिमी भारत की यात्रा, अनु. एवं सपां, गोपालनारायण बहुरा, राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर – 1965, पृ. सं. 38–39ण
6. वाल्मिकी रामायण, अयोध्या, 50.35
7. महाभारत, आदि पर्व, 131.31 – 58
8. हेन्डले, टी.एच., एन अकाउन्ट ऑफ द मेवाड भील्स, जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, खण्ड – 44, भाग–1, संख्या 1–4, 1875, पृ. सं. 369
9. मैलिनोवस्की, बी. मैजिक, साइन्स एण्ड रिलीजन एण्ड अदर एसेज 'मिथ इन प्रिमिटिव साइकोलोजी' लन्दन, 1974, पृ. सं. 126
10. भट्ट, नीरजा, राजस्थान का भील समाज, हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2007, पृ. सं. 7
11. अर्सकिन, के.डी., पूर्वोक्त, पृ. सं. 190
12. व्हीं, पृ. सं. 163
13. श्यामलदास, वीर विनोद, मेवाड का इतिहास, द्वितीय भाग, खण्ड–2, मोतीलाल, बनारसी दास, दिल्ली, 1986, पृ. सं. 1005
14. टॉड, कर्नल जेम्स, एनल्स एण्ड एंटीक्विटीज ऑफ राजस्थान, विलियम क्रुक (संपादित), खण्ड – 1, पृ. सं. 259, पुनर्मुद्रण, मोतीलाल, बनारसीदास, दिल्ली, 1987
15. वही , पृ. 262
16. वही,
17. अर्सकिन, के.डी. पूर्वोक्त, पृ. सं. 228
18. कार्स्टेयर्स, जार्ज, शेफर्ड ऑफ उदयपुर एण्ड द लैण्ड ही लब्ड, लंदन, 1926, पृ. 25
19. जोशी, करूणा, पूर्वोक्त पृ. सं. 28
20. वही
21. मनगढ़ पहाडी पर भगत आन्दोलन की वार्षिक सभा पर 1913 में अंग्रेजो द्वारा गोलीबारी की गई
22. शुक्ल, रामलखन (संपा.), आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1938, पृ. सं. 98
23. वही
24. वही
25. वही पृ. सं. 268